ॐ

शिवलिंग पूजा मंडन

लेखक- पंडित आदित्यनारायण शास्त्री

Public by Itvipin.com

॥ॐ॥

शिवलिंग पूजा मंडन

पंडित आदित्यनारायण शास्त्री का
शास्त्रार्थ समाजी के साथ

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्व मम देवदेव॥

Publishing by

IYVIPIN.COM (VIPIN YADAV)

प्रस्तावना

इस ग्रंथ को लिखने का मेरा उद्देश किसी भी संप्रदाय के अथवा जन समुदाय की भावनाओं को ठेस पहुंचाना नहीं है,अपितु सत्य विशुद्ध सनातन ज्ञान विज्ञान का प्रकाश करना मात्र है . कतिपय नास्तिक, समाजी एवं विधर्मिजन परम प्राचीन सनातन पूजा पद्धति मे अग्रणी भूमिका को निर्वाहन करने वाले भगवान सदाशिव के चिन्मय स्वरूप शिवलिंग का अपमान करते हैं और उसे शिश्न कहकर उसका उपहास करते हैं, इस कारण से आचार्य सानिध्य विहीन हिंदुओं के (विशेष करके युवाओं के) मन में अनेकानेक संशय उत्पन्न होते हैं. और फिर नास्तिकता को प्राप्त होते हैं अन्यथा धर्मांतरण जाल का शिकार बनते हैं .इनका समाधान करना हमारा कर्तव्य है.बस यही इस ग्रंथ को लिखने का उद्देश्य है .

परंपरा प्राप्त आचार्यों को दास द्वारा लिखे ग्रंथ मे कोई गलती दिखे तो अबोध बालक जानकार क्षमा करें एवं हमें संशोधन का आदेश प्रदान करें.

नारायण!

निवेदकः- पं० आदित्यनारायण शास्त्री

समाजीः- ये तुम्हारा शिवलिंग क्या है?

पंडित जीः- भगवान सदाशिव का चिन्मय स्वरूप.

समाजीः- इसका क्या प्रमाण है? सबको पता है शिवलिंग शंकर का गुप्तांग और जलहरी पार्वती की योनी का प्रतीक है.

यत्र लिङ्गं तत्र योनियन्त्रं योनिस्ततः शिवः ।
उभयोश्चैव तेजोभिः शिवलिङ्गं व्यजायत॥
~ (नारदपंचरात्र मे रात्र-3 का प्रथम अध्याय)

ये तो एक प्रमाण है, ब्रह्मांड पुराण, भविष्य पुराण आदि से मै अनेक प्रमाणों से लिंग योनी सिद्ध कर सकता हूँ.

पंडित जीः- जी पुराणो मे लिंग और योनी का वर्णन बहुत जगह आता है परंतु वहा उसका अर्थ पृथक है और दर्शनिक है

समाजीः- हम आपकी इस बात को कैसे मान ले प्रभू?इसका क्या प्रमाम है की पुराणो मे दार्शनिकता है? और अगर है तो कहा सत्य कथन इतिहास है और कथा दर्शन इसका निर्णय कैसे हो

पंडित जीः- आपको इसके लिए पुराणो की लेखन शैली को समझना होगा, व्यास जी ने इस विषय मे देवीभागवत महापुराण मे यह तथ्य उद्भासित किया है की-

शास्त्राण्यपि विचित्राणि जल्पवादयुतानि च।
त्रिविधानि पुराणानि शास्त्राणि विविधानि च।
वितण्डाच्छलयुक्तानि गर्वामर्षकराणि च ॥

नानार्थवादयुक्तानि हेतुमन्ति बृहन्ति च ॥
(देवी भागवत प्रथम स्कंद,प्रथम अध्याय श्लोक 13)

अर्थातः- शास्त्र भी विचित्र प्रकारके तर्क-वितर्कसे युक्त हैं। पुराण तीन प्रकारके तथा शास्त्र विविध प्रकारके हैं, जो नानाविध वाद-विवाद तथा छल-प्रपंचसे युक्त हैं और अहंकार तथा अमर्ष उत्पन्न करनेवाले हैं, वे अनेक अर्थवाद तथा हेतुवादसे युक्त और बहुत विस्तारवाले हैं ॥ १३॥

अब रही बात अर्थवाद पे निर्णय लेने की, की कैसे जाने कहा अर्थवाद कहा नही?तो अभी के लिए आप इतना समझ लीजिए कि भगवान वेदव्यास जी ने अपने मन के अंदर क्या विचार करके किसी श्लोक को लिखा है यह तो उनके शिष्य ही जानते हैं और उनके गुरु शिष्य परंपरा में शंकराचार्य जी आते हैं ,अतः वह अर्थवाद के निर्णायक होंगे.

समाजीः- फिर दारुवन वाली कथा मे क्या अर्थवाद है बताओ जरा ?

दारुवन की कथा कुछ इस प्रकार हैः-

अथ द्वादशोऽध्यायः
हाटकेश्वरलिंगके प्रादुर्भाव एवं माहात्म्यका वर्णन

ऋषय ऊचुः
सूत जानासि सकलं वस्तु व्यासप्रसादतः ।
तवाज्ञातं न विद्येत तस्मात्पृच्छामहे वयम् ॥ १
लिंगं च पूज्यते लोके तत्त्वत्या कथितं च यत्।
तत्तथैव न चान्यद्धा कारणं विद्यते त्विह|| २
बाणरूपा श्रुता लोके पार्वती शिववल्लभा।
एतत्किं कारणं सूत कथय त्वं यथाश्रुतम् ॥ ३

ऋषि बोले- हे सूतजी! आप व्यासजीकी कृपासे सब कुछ जानते हैं, कोई भी बात आपसे अज्ञात नहीं है, इसीलिये हमलोगआपसे पूछते हैं ॥ १ ॥

आपसे पूछते हैं ॥ १ ॥
आपने पूर्वमें कहा था कि लोकमें सभी जगह शिवलिंगकी पूजा होती है। क्या वह लिंग होनेके कारण ही पूजित है अथवा अन्य कोई कारण है ? ॥ २
शिववल्लभा पार्वती लोकमें बाणलिंगरूपा कही जाती हैं। हे सूतजी ! इसका क्या कारण है, इस विषयमें आपने जैसा सुना है, वैसा कहिये ॥ ३ ॥

सूत उवाच

कल्पभेदकथा चैव श्रुता व्यासान्मया द्विजाः ।तामेव कथयाम्यद्य श्रूयतामृषिसत्तमाः ॥ ४

पुरा दारुवने जातं यद् वृत्तं तु द्विजन्मनाम् । तदेव श्रूयतां सम्यक् कथयामि यथाश्रुतम् ॥ ५

दारुनाम वनं श्रेष्ठं तत्रासन् ऋषिसत्तमाः । शिवभक्ताः सदा नित्यं शिवध्यानपरायणाः ॥ ६

त्रिकालं शिवपूजां च कुर्वन्ति स्म निरन्तरम्। नानाविधैः स्तवैर्दिव्यैस्तुष्टुवुस्ते मुनीश्वराः ॥ ७

ते कदाचिद्वने याताः समिधाहरणाय च। सर्वे द्विजर्षभाः शैवाः शिवध्यानपरायणाः ॥ ८

एतस्मिन्नंतरे साक्षाच्छंकरो नीललोहितः ।
विरूपं च समास्थाय परीक्षार्थं समागतः|| ९

दिगम्बरोऽतितेजस्वी भूतिभूषणभूषितः । स चेष्टामकरोहुष्टां हस्ते लिंगं विधारयन् ॥ १०

मनसा च प्रियं तेषां कर्तुं वै वनवासिनाम्। जगाम तद्वनं प्रीत्या भक्तप्रीतो हरः स्वयम् II ११

तं दृष्ट्वा ऋषिपत्यस्ताः परं त्रासमुपागताः । विह्वला विस्मिताश्चान्याः समाजग्मुस्तथा पुनः ॥ १२

आलिलिंगुस्तथा चान्याः करं धृत्वा तथापराः । परस्परं तु संघर्षात्संमग्नास्ताः स्त्रियस्तदा II १३

एतस्मिन्नेव समये ऋषिवर्याः समागमन्। विरुद्धं तं च ते दृष्ट्वा दुःखिताः क्रोधमूच्छिताः ॥ १४

तदा दुःखमनुप्राप्ताः कोऽयं कोऽयं तथाब्रुवन् । समस्ता ऋषयस्ते वै शिवमायाविमोहिताः ॥ १५

यदा च नोक्तवान् किंचित्सोऽवधूतो दिगम्बरः । ऊचुस्तं पुरुषं भीमं तदा ते परमर्षयः ।। १६

त्वया विरुद्धं क्रियते वेदमार्गविलोपि यत् । ततस्त्वदीयं तल्लिगं पततां पृथिवीतले ॥ १७

सूतजी बोले- हे ब्राह्मणो! हे ऋषिसत्तमो ! मैंने व्यासजीसे जो कल्पभेदकी कथा सुनी है, उसीका आज वर्णन कर रहा हूँ, आपलोग सुनें ॥ ४ ॥

पूर्वकालमें दारुवनमें ब्राह्मणोंके साथ जो घटना घटी, उसीको आप लोग सुनें। जैसा मैंने सुना है, वैसा ही कहता हूँ। हे ऋषिसत्तमो! जो दारु नामक श्रेष्ठ वन है, वहाँ नित्य शिवजीके ध्यानमें तत्पर शिवभक्त ब्राह्मण रहा करते थे ॥ ५-६
हे मुनीश्वरो वे तीनों कालोंमें सदा शिवजीकी पूजा करते थे और नाना प्रकारके स्तोत्रोंसे उनकी स्तुति किया करते थे। शिवध्यानमें मग्न रहनेवाले वे शिवभक्त श्रेष्ठ ब्राह्मण किसी समय समिधा लेनेके लिये वनमें गये हुए थे॥७-८

इसी बीच उन लोगोंकी परीक्षा लेनेहेतु साक्षात् नीललोहित [भगवान्] शंकर विकट रूप धारणकर वहाँ आये। वे दिगम्बर, भस्मरूप भूषणसे विभूषित तथा महातेजस्वी भगवान् शंकर हाथमें [तेजोमय] लिंगको धारणकर विचित्र लीला करने लगे ॥ ९-१० II
मनसे उन वनवासियोंका कल्याण करनेके लिये भक्तोंसे प्रेम करनेवाले वे शिव स्वयं प्रेमपूर्वक उस वनमें गये। उन्हें देखकर ऋषिपत्नियाँ अत्यन्त भयभीत हो गयीं और अन्य स्त्रियाँ विह्वल तथा आश्चर्यचकित होकर वहीं चली आयीं। कुछ स्त्रियोंने परस्पर हाथ पकड़कर आलिंगन किया, कुछ स्त्रियाँ आपसमें आलिंगन करनेके कारण अत्यन्त मोहविह्वल हो गयीं ॥ ११-१३ ॥
इसी समय सभी ऋषिवर [वनसे समिधा लेकर] आ गये और वे इस आचरणको देखकर [उसे समझ नहीं सके और] दुःखित तथा क्रोधसे व्याकुल हो गये। तब शिवकी मायासे मोहित हुए समस्त ऋषिगण दुःखित हो आपसमें कहने लगे- 'यह कौन है, यह कौन है ?' ॥ १४-१५
जब उन दिगम्बर अवधूतने कुछ भी नहीं कहा, तब उन महर्षियोंने भयंकर पुरुषका रूप धारण किये हुए उन शिवजीसे कहा- हे अवधूत ! तुम वेदमार्गका लोप करनेवाला यह विरुद्ध आचरण कर रहे हो, अतः तुम्हारा यह विग्रहरूप लिंग [शीघ्र ही] पृथ्वीपर गिर जाय ॥ १६-१७ ॥

इत्युक्ते तु तदा तैश्च लिंगं च पतितं क्षणात् । अवधूतस्य तस्याशु शिवस्याद्भुतरूपिणः ॥ १८

तल्लिगं चाग्निवत्सर्वं यद्ददाह पुरा स्थितम्। यत्र यत्र च तद्याति तत्र तत्र दहेत्पुनः ॥ १९

पाताले च गतं तच्च स्वर्गे चापि तथैव च। भूमौ सर्वत्र तद्यातं न कुत्रापि स्थिरं हि तत् ॥ २०

लोकाश्च व्याकुला जाता ऋषयस्तेऽतिदुःखिताः । न शर्म लेभिरे केचिद्देवाश्च ऋषयस्तथा ॥ २१

न ज्ञातस्तु शिवो वैस्तु ते सर्वे च सुरर्षयः। दुःखिता मिलिताः शीघ्रं ब्रह्माणं शरणं ययुः ॥ २२

तत्र गत्वा च ते सर्वे नत्वा स्तुत्वा विधिं द्विजाः ।

तत्सर्वमवदन् वृत्तं ब्रह्मणे सृष्टिकारिणे ॥ २३ ब्रह्मा तद्वचनं श्रुत्वा शिवमायाविमोहितान् । ज्ञात्वा तान् शङ्करं नत्वा प्रोवाच ऋषिसत्तमान् ॥ २४

सूतजी बोले- [हे महर्षियो!] उनके ऐसा

कहनेपर अद्भुत रूपवाले उन अवधूतवेषधारी शिवका [वह चिन्मय] लिंग शीघ्र ही पृथ्वीपर गिर पड़ा ॥ १८ ॥ अग्नितुल्य उस माहेश्वरलिंगने सामने स्थित सभी वस्तुओंको जला डाला और इतना ही नहीं, वह फैलकर जहाँ-जहाँ जाता, सब कुछ भस्म कर देता। वह पातालमें तथा स्वर्गमें भी वैसे ही गया; वह पृथ्वीपर सर्वत्र गया और कहीं भी स्थिर न रहा ॥ १९-२० ॥

सारे लोक व्याकुल हो उठे और वे ऋषिगण अत्यन्त दुःखित हो गये। देवता और ऋषियोंमें किसीको भी अपना कल्याण दिखायी न पड़ा ॥ २१ ॥ जिन देवता और ऋषियोंने शिवजीको नहीं • पहचाना, वे सब दुःखित हो आपसमें मिलकर ब्रह्माजीकी शरणमें गये। हे ब्राह्मणो! वहाँ जाकर उन सभीने ब्रह्माको प्रणाम तथा स्तुतिकर सृष्टिकर्ता * ब्रह्मासे सारा वृत्तान्त निवेदन किया ॥ २२-२३ ॥ तब ब्रह्माजी उनका वचन सुनकर उन श्रेष्ठ

ऋषियोंको शिवकी मायासे मोहित जानकर सदाशिवको नमस्कारकर कहने लगे - ॥ २४ ॥

ब्रह्मोवाच

ज्ञातारश्च भवन्तो वै कुर्वते गर्हितं द्विजाः। अज्ञातारो यदा कुर्युः किं पुनः कथ्यते पुनः ॥ २५

विरुद्धचैवं शिवं देवं कुशलं कः समीहते। मध्याह्नसमये यो वै नातिथिं च परामृशेत् ॥ २६

तस्यैव सुकृतं नीत्वा स्वीयं च दुष्कृतं पुनः । संस्थाप्य चातिथिर्याति किं पुनः शिवमेव वा ॥ २७

यावल्लिगं स्थिरं नैव जगतां त्रितये शुभम्। जायते न तदा क्वापि सत्यमेतद्वदाम्यहम् ॥ २८

भवद्भिश्च तथा कार्य यथा स्वास्थ्यं भवेदिह। शिवलिंगस्य ऋषयो मनसा संविचार्यताम् ॥२९

ब्रह्माजी बोले- हे ब्राह्मणो! आपलोग ज्ञानी होकर भी निन्दित कर्म कर रहे हैं, तो यदि अज्ञानी लोग ऐसा करें, तो फिर क्या कहा जाय ! ॥ २५ ॥ इस प्रकार सदाशिवसे विरोध करके भला कौन कल्याणकी कामना कर सकता है! यदि कोई मध्याह्नकालमें आये हुए अतिथिका सत्कार नहीं करता, तो वह अतिथि उसका सारा पुण्य लेकर और अपना सारा पाप उसको देकर चला जाता है; फिर शिवजीके विषयमें तो कहना ही क्या ! ॥ २६-२७॥ अतः जबतक यह [शैव] लिंग स्थिर नहीं होता, तबतक तीनों लोकोंमें कहीं भी लोगोंका कल्याण नहीं हो सकता है; मैं यह सत्य कहता हूँ। हे ऋषियो! अब आपलोग मनसे विचार करें और ऐसा उपाय करें, जिससे शिवलिंगकी स्थिरता हो जाय ॥ २८-२९ ॥

फिर आगे की कथा में शिवलिंग की पूजा का विधान बताया गया है

समाजी:- यह कथा शिवपुराण के कोटी रूद्र संहिता के अध्याय 12वे का है, अब पंडित जी उत्तर दें??

पंडित जीः- अब यह रहस्य ध्यान से सुनिये.

दारूवन कथा रहस्य जाने तब पता लगे | "शिवलिङ्ग क्या है?"

शिवपुराण की कोटिरुद्र संहिता, अध्याय - 12 में दारुवन की कथा आती है जिसके माध्यम से कुछ सर्वदा से (बुद्ध जैन चार्वाक काल से ही) अज्ञानी लोगों द्वारा यह कहा जाता है कि शिवलिङ्ग साकार शिव का 'शिश्न' है और शिवलिङ्ग जिस योनि पर स्थित है वह साकार पार्वती देवी की योनि है। परन्तु यह कहना ठीक नहीं है। यह दारुवन की कथा को केवल एक प्रतीकात्मक आख्यान समझना चाहिए क्योंकि पुराण की कई कथायें प्रतीकात्मक ही होती हैं, मैंने प्रारंभ मे ही संकेत किया था

शास्त्राण्यपि विचित्राणि जल्पवादयुतानि च।
त्रिविधानि पुराणानि शास्त्राणि विविधानि च।
वितण्डाच्छलयुक्तानि गर्वामर्षकराणि च ॥
नानार्थवादयुक्तानि हेतुमन्ति बृहन्ति च ॥
(देवी भागवत प्रथम स्कंद,प्रथम अध्याय श्लोक 13)

अर्थातः- शास्त्र भी विचित्र प्रकारके तर्क-वितर्कसे युक्त हैं। पुराण तीन प्रकारके तथा शास्त्र विविध प्रकारके हैं, जो नानाविध वाद-विवाद तथा छल-प्रपंचसे युक्त हैं और अहंकार तथा अमर्ष उत्पन्न करनेवाले हैं, वे अनेक अर्थवाद तथा हेतुवादसे युक्त और बहुत विस्तारवाले हैं ॥ १३॥

अब आपके मन मे विचार आ रहा होगा की आखिर इस दारुवन की कथा को प्रतीकात्मक ही क्यों समझना चाहिए? तो बंधू इसका कारण हमें शिवपुराण की सर्वप्रथम संहिता 'विद्येश्वर संहिता (वि० स०)' से पता चलेगा।

वि० स० 9/11 में स्पष्ट रूप से लिङ्ग व वेर (अर्थात् साकाररूप) दोनों की पूजा को भिन्न रूप से बताया गया है।

एतत्काले तु यः कुर्यात् पूजां मल्लिङ्गवेरयोः ।
कुर्यात् स जगतः कृत्यं स्थितिसर्गादिकं पुमान् ॥ ११

अर्थातः- इस समय जो मेरे लिंग (निष्कल-अंग- आकृतिसे रहित निराकार स्वरूपके प्रतीक) और वेर (सकल-साकाररूपके प्रतीक विग्रह) की पूजा करेगा, वह पुरुष जगत्की सृष्टि और पालन आदि कार्य भी - कर सकता है ॥ ११ ॥

उसी संहिता के 9/19 में स्पष्ट है कि शिवलिङ्ग स्तम्भाकार है, शिश्नाकार नहीं।

अनाद्यन्तमिदं स्तम्भमणुमात्रं भविष्यति ।
दर्शनार्थं हि जगतां पूजनार्थं हि पुत्रकौ ॥ १९

अर्थातः- हे पुत्रो ! जगत्के लोग इसका दर्शन और पूजन कर सकें, इसके लिये यह अनादि और अनन्त ज्योति अत्यन्त ज्योतिस्तंभ छोटा हो जायगा ।।

9/30-31 में पुनः कहा है कि स्तम्भरूप व साकाररूप दोनों भिन्न हैं, स्तम्भरूप निष्कल (यानि अङ्गरहित है),

सकलं निष्कलं चेति स्वरूपद्वयमस्ति मे|
नान्यस्य कस्यचित्तस्मादन्यः सर्वोऽप्यनीश्वरः ॥ ३०

पुरस्तात् स्तम्भरूपेण पश्चाद् रूपेण चार्भकौ ।
ब्रह्मत्वं निष्कलं प्रोक्तमीशत्वं सकलं तथा ॥ ३१

अर्थातः- मेरे दो रूप हैं- 'सकल' और 'निष्कल'। दूसरे किसीके ऐसे रूप नहीं हैं, अतः [मेरे अतिरिक्त] अन्य सब अनीश्वर हैं। हे पुत्रो ! पहले मैं स्तम्भरूपसे प्रकट हुआ, फिर अपने साक्षात्-रूपसे । 'ब्रह्मभाव' मेरा 'निष्कल' रूप और 'महेश्वरभाव' सकल रूप है। ये दोनों मेरे ही सिद्धरूप हैं; मेरे अतिरिक्त किसी • दूसरेके नहीं हैं। इस कारण तुम दोनोंका अथवा अन्य किसीका भी ईश्वरत्व कभी नहीं है ॥ ३०-३२॥

अतः बंधु अब इसे शिश्न तो कहा ही नहीं जा सकता, ब्रह्मभाव निष्कल है, साकार शिव सकल हैं।
आगे देखो तो उसी विद्येश्वरसंहिता के 9/39-43 में स्पष्ट कहा है कि मेरी ब्रह्मरूपता का बोध कराने के लिए ही निष्कल लिङ्ग प्रकट हुआ, निराकार शिव लिङ्गी है और यह स्तम्भकार प्रतीक।

ईशत्वादेव मे नित्यं न मदन्यस्य कस्यचित् ।
आदौ ब्रह्मत्वबुद्ध्यर्थं निष्कलं लिङ्गमुत्थितम् ॥ ३९

तस्मादज्ञातमीशत्वं व्यक्तं द्योतयितुं हि वाम् ।
सकलोऽहमतो जातः साक्षादीशस्तु तत्क्षणात् ॥ ४०

सकलत्वमतो ज्ञेयमीशत्वं मयि सत्वरम् ।
यदिदं निष्कलं स्तम्भं मम ब्रह्मत्वबोधकम् ॥ ४१

लिङ्गलक्षणयुक्तत्वान्मम लिङ्गं भवेदिदम् ।
तदिदं नित्यमभ्यर्यं युवाभ्यामत्र पुत्रकौ ॥४२

मदात्मकमिदं नित्यं मम सान्निध्यकारणम् ।
महत्पूज्यमिदं नित्यमभेदाल्लिङ्गलिङ्गिनोः ॥४३

अर्थातः- जो जगत्-सम्बन्धी पाँच कृत्य हैं, वे सदा मेरे ही हैं, मेरे अतिरिक्त दूसरे किसीके नहीं हैं; क्योंकि मैं ही सबका ईश्वर हूँ। पहले मेरी ब्रह्मरूपताका बोध करानेके लिये 'निष्कल' लिंग प्रकट हुआ था, फिर तुम दोनोंको अज्ञात ईश्वरत्वका स्पष्ट साक्षात्कार करानेके लिये मैं साक्षात् जगदीश्वर ही 'सकल' रूपमें तत्काल प्रकट हो गया। अतः मुझमें जो ईशत्व है, उसे ही मेरा सकलरूप जानना चाहिये तथा जो यह मेरा निष्कल स्तम्भ है, वह मेरे ब्रह्मस्वरूपका बोध करानेवाला है। हे पुत्रो ! लिंग-लक्षणयुक्त होनेके कारण यह मेरा ही लिंग (चिह्न) है। तुम दोनोंको प्रतिदिन यहाँ रहकर इसका पूजन करना चाहिये। यह मेरा ही स्वरूप है और मेरे सामीप्यकी प्राप्ति करानेवाला है। लिंग और लिंगीमें नित्य अभेद होनेके कारण मेरे इस लिंगका महान् पुरुषोंको भी पूजन करना चाहिये I

इसी श्रृंखला मे आगे देखा जाए तो 5/10-12 में भी यही कहा गया है कि शिवलिङ्ग निराकार शिव का निष्कल(अङ्गरहित) प्रतीक है।

शिवेनोक्तं प्रवक्ष्यामि क्रमाद् गुरुमुखाच्छ्रुतम् ।
शिवैको ब्रह्मरूपत्वान्निष्कलः परिकीर्तितः ॥ १०

रूपित्वात् सकलस्तद्वत्तस्मात् सकलनिष्कलः ।
निष्कलत्वान्निराकारं लिङ्गं तस्य समागतम् ॥ ११

सकलत्वात् तथा वेरं साकारं तस्य सङ्गतम् ।
सकलाकलरूपत्वाद् ब्रह्मशब्दाभिधः परः ॥ १२

अर्थातः- इस विषयमें भगवान् शिवने जो कुछ कहा है और उसे मैंने गुरुजीके मुखसे जिस प्रकार सुना है, उसी तरह क्रमशः वर्णन करूँगा। एकमात्र भगवान् शिव ही ब्रह्मरूप होनेके कारण निष्कल (निराकार) कहे गये हैं ॥ १०॥

रूपवान् होनेके कारण उन्हें 'सकल' भी कहा गया है। इसलिये वे सकल और निष्कल दोनों हैं। शिवके निष्कल-निराकार होनेके कारण ही उनकी पूजाका आधारभूत लिंग भी निराकार ही प्राप्त हुआ है अर्थात् शिवलिंग शिवके निराकार स्वरूपका प्रतीक है ॥ ११ ॥

इसी तरह शिवके सकल या साकार होनेके कारण उनकी पूजाका आधारभूत विग्रह साकार प्राप्त होता है अर्थात् शिवका साकार विग्रह उनके साकार स्वरूपका प्रतीक होता है। सकल और अकल (समस्त अंग-आकारसहित साकार और अंग-आकारसे सर्वथा रहित निराकार)-रूप होनेसे ही वे 'ब्रह्म' शब्दसे कहे जानेवाले परमात्मा हैं ॥ १२ ॥

11/22-23 व 16/107 में भी स्पष्ट है कि शिवलिङ्ग में स्तम्भाकार विग्रह चैतन्यस्वरूप ब्रह्म का प्रतीक है और उसकी वेदी अथवा पीठ अम्बा देवी का प्रतीक हैं, जो शिव की शक्ति हैं। प्रमाण अगर अन्य पुराणो से देने लग जाऊ तो भंडार लग जाए, इतना ही बुद्धिमान व्यक्ति के समझने के लिये पर्याप्त है

कमाल की बात तो यह है की हम सत्यवादी एवं धार्मिक जन इतना प्रमाण होते हुए भी बिना हठ और दुराग्रह किये इस दारुवन की कथा में साकार शिव के लिङ्ग का अर्थ "मानवी शिश्न" और साकार पार्वती की योनि का अर्थ "मानवी स्त्री योनी" ही ले रहे हैं, न कि कोई विग्रह। आगे हम बतायेंगे कि ऐसा क्यों कर रहें हैं।

तो अब यह स्पष्ट हो चुका है कि शिवलिङ्ग साकार शिव का प्रतीक अथवा लिङ्ग नहीं है। परन्तु यदि हम दारुवन की कथा को पढ़ें तो नग्नरूप या दिगम्बररूप में आये साकार शिव का ही लिङ्ग या शिश्न भूमि पर गिरा। शिश्न तो सकल होता है, निष्कल नहीं और शिश्न साकार पुरुष का प्रतीक होता है निराकार का नहीं, वैसे ही दारुवन की कथा में साकार पार्वती योनिरूप धारण करती हैं, परन्तु स्त्रीयोनि भी निष्कल नहीं होती, योनि स्त्री का प्रतीक होती है। इसलिए हमें दारुवन की कथा को केवल प्रतीकात्मक ही समझना चाहिए, क्योंकि यदि इसको शब्दशः वास्तविक घटना के रूप में ही समझा गया, तो यह विद्येश्वर संहिता के विरोध में हो जायेगा। और भगवान व्यास देव जैसे आप्त पुरुषो के वचनो मे विरोधाभास संभव नही

दारुवन की कथा में दिगम्बर साकारशिव प्रतीक हैं दिगम्बर निराकार शिव का, दिगम्बर अर्थात् जिसने आकाश को वस्त्र की भान्ति ओढ़ा हो अथवा आकाश भी जिसमें स्थित हो [एतस्मिन्नु खल्वक्षरे..(बृहदारण्यकोपनिषद् - 3/8/11), की युक्ति से पता चलता है की आकाश भी चैतन्यरूप ब्रह्म में ओतप्रोत है]।
साकार पुरुष का लिङ्ग होता है "शिश्न", चूंकि इस कथा में साकार शिव निराकार शिव का प्रतीक है इसलिए साकार लिङ्ग यानि शिश्न भी निराकार शिव के लिङ्ग का प्रतीक होगा। निराकार शिव का लिङ्ग है स्वयं को सीमित समझनेवाला "आत्मा" अर्थात् हमारा आत्मा ही वह लिङ्ग हैं जिसको जानने से निराकार शिवरूप लिङ्गी को जाना जा सकता है, आत्मज्ञान ही से निराकार शिव को जाना जा सकता है। हमारा आत्मा ही शिव का बोध करानेवाला आध्यात्मिक शिवलिङ्ग है।

इसी तरह इस कथा में साकार पार्वती प्रतीक है निराकार पार्वती का यानि शिव की शक्ति का। स्त्री की योनि उसका प्रतीक या लिङ्ग होती है, चूंकि इस कथा में साकार पार्वती निराकार पार्वती का प्रतीक हैं इसलिए साकार योनि भी निराकार पार्वती की योनि का प्रतीक होगा। निराकार पार्वती निराकार शिव की शक्ति हैं। जब शिव इस शक्ति से वियोग होने की लीला करते हुए जीवरूप होते हैं तब त्रिविध दुःख रूप अग्नि जीव को संतप्त करती है, दारुवन की कथा में भी जबतक शक्ति से शिव का योग नहीं हुआ तबतक शिश्न की अग्नि ने हाहाकार मचा के सबको संतप्त कर दिया था। परन्तु जब यह जीव अपने आत्मारूप लिङ्ग को जानने लग जाता है तो यह शक्ति का शिव से योग होने लगता है और यह जीव शिवरूप हो जाता है, तब यह त्रिविध दुःखरूप अग्नि भी शान्त हो जाती है।

इस कथा में आगे यह भी बताया गया है कि जब पार्वती ने योनिरूपा होकर साकार शिव के शिश्न को धारण कर लिया तो आगे चल के वही हाटकेश्वर शिवलिङ्ग के रूप में प्रतिष्ठित हुआ। अर्थात् विग्रहरूप हाटकेश्वर शिवलिङ्ग इसी शिवशक्ति के योग का प्रतीक है, अर्थात् शिवलिङ्गरूप विग्रह इस बात का प्रतीक है कि "शिव त्रिविधताप से मुक्त हैं क्योंकि वह अपनी शक्ति में प्रतिष्ठित हैं अतः तुम भी आत्मारूप लिङ्ग को जानो, शक्ति या कुण्डलिनी का शिव से योग करवाओ"।

इस कथा में लिङ्ग का अर्थ हमने शिश्न ही लिया क्योंकि जैसा इस कथा का सन्देश है वैसा ही कुछ सन्देश भगवान वेद व्यास कृत इतिहास ग्रंथ महाभारत सौप्तिकपर्व/18 में आई लघुकथा का भी है, जिसमें शिव क्रोधित होकरके अपना लिङ्ग काटके फेंक देते हैं क्योंकि प्रजा की सृष्टि किसी दूसरे ने कर दी, यह कथा भी प्रतीकात्मक रूप से यही सन्देश देती है कि जिस प्रकार पुरुष का लिङ्ग यानि शिश्न प्रजा के होने का कारण है वैसे ही निराकार शिव का लिङ्ग यानि हमारा आत्मा भी इस सृष्टि का कारण है, यही हमें जानना है।

अतः निष्कर्ष यह है कि शिवलिङ्ग कोई शिश्न नहीं है और न ही इसे शिश्न समझा जाना चाहिए, शिवलिङ्ग जिस पीठ या वेदी या योनि में स्थित है वह कोई स्त्रीयोनि भी नहीं है, उसे योनि कहा जाता है क्योंकि वह सृष्टि को जन्म देने वाली शिव की शक्ति है, सब विश्वको जन्म देनेके के कारण उसे योनि कहा गया। परन्तु कुछ प्राचीन शिवलिङ्ग हैं जो जानबूझकर शिश्न के आकार में तन्त्र के साधकों द्वारा बनाये गये हैं, परन्तु फिर भी तन्त्र का कोई भी साधक उनमें शिश्न की भावना नही रखता, उनमें ईश्वर की भावना रख के ही उन्हें पूजा जाता है, ऐसा इसलिए ताकि उन्हें लोगों द्वारा अपवित्र माने जानेवाली वस्तु में भी शिव ही दिखाई दे, पवित्र वस्तु में तो ईश्वरभावना कर ली, परन्तु अपवित्र वस्तु में न की तो मुक्ति संभव नहीं, ऐसी उन तंत्र साधकों की मान्यता होती है, इसमें भी कुछ गलत नहीं है, यदि उन्हें ये करके ईश्वरत्व की प्राप्ति हो रही है तो ये भी ठीक है। परन्तु शिवलिङ्ग शिश्न के आकार में ही हो यह आवश्यक नहीं, वेदपुराण की परंपरा तो स्तम्भाकार शिवलिङ्ग की उपासना ही मानती है, तन्त्र की परंपरा में भी शिवलिङ्ग की स्तम्भाकार रूप में और शिश्नाकार रूप, दोनों में पूजा होती है। परन्तु शिवलिङ्ग कैसा भी हो, स्तम्भाकार या शिश्नाकार, उसे कभी भी शिश्न की भावना रख के नहीं पूजा जाता, न ही शिश्न समझा जाता है।

समाजीः- पंडित जी पहली बात तो ये बताइये की पूर्व दिये गए अनेक प्रमाणों के आधार पर एक बार हम शिवलिंग को निराकार शिव मान ले फिर भी ये कैसे सिद्ध होगा की जो जलहरी है वो सामान्य नारी का भग (योनी) नही?

पंडित जीः- चलो इसकी परिभाषा भी देख लो, अगर हम विद्येश्वरसंहिता के 16वे अध्याय के श्लोक 101 और 102 का अनुशीलन किया जाए तो मेरी यह बात भी सिद्ध हो जायेगी, यहा व्यास जी लिखते हैं-

भं वृद्धिं गच्छतीत्यर्थाद्भगः प्रकृतिरुच्यते।
प्राकृतैः शब्दमात्राद्यैः प्राकृतेन्द्रियभोजनात् ॥ १०१
भगस्येदं भोगमिति शब्दार्थों मुख्यतः श्रुतः ।
मुख्यो भगस्तु प्रकृतिभंगवाञ्छिव उच्यते ॥१०२

अर्थातः- शब्दादि पंचतन्मात्राओं तथा पंचेन्द्रियोंसे विषय ग्रहण करनेसे 'भ' अर्थात् वृद्धिको 'गच्छति' अर्थात् प्राप्त होती है, इसलिये 'भग' शब्दका लिखी प्रकृति है। भोग ही भगका मुख्य शब्दार्थ है। मुख्य 'भग' प्रकीति है और 'भगवान्' शिव को कहा जाता है.

यहा स्पस्ट हो रहा की पर्मेश्वर् सदाशिव निज इक्षा से प्रकीति रूपी भग मे स्थापित हुए अतः वो भगवान कहे गए.

समाजीः- चलो महाराज अगर लिंग आदि को निराकार मान भी लें तो प्रश्न उठेगा अनंत निराकार स्तंभरूप लिंग भला छोटे से पत्थर में कैसे पूजित हो सकता है ? यदि निराकार की उपासना करनी हो तो व्यक्ति नेत्र बंद कर मन में ध्यान लगावे भला व्यर्थ में पत्थर पर दूध दही आदि क्यों चढ़ावे ?

पंडित जीः- बिल्कुल प्रभु जी हमारे शिव पुराण में निराकार उपासना का भी विशेष उल्लेख है सरकार की उपासना करते ही करते व्यक्ति निराकार में स्थित हो जाता है इसका प्रमाण देखिए

लिंगं तु द्विविधं प्रोक्तं बाह्यमाभ्यंतरं द्विजाः ।
बाह्यं स्थूलं समुद्दिष्टं सूक्ष्ममाभ्यंतरं मतम् ॥ ५१

कर्मयज्ञरता ये च स्थूललिंगार्चने रताः ।
असतां भावनार्थाय सूक्ष्मेण स्थूलविग्रहाः ॥ ५२

आध्यात्मिकं तु यल्लिंग प्रत्यक्षं यस्य नो भवेत् । स तल्लिंगे तथा स्थूले कल्पयेच्च न चान्यथा ॥ ५३

ज्ञानिनां सूक्ष्मममलं भावात्प्रत्यक्षमव्ययम् ।
यथा स्थूलमयुक्तानामुत्कृष्टादौ प्रकल्पितम् ॥ ५४
~(रुद्रसंहिता,श्रृष्टि खंड,अध्याय 12, श्लोक 41-44)

अर्थातः- हे द्विजो! शिवलिंग दो प्रकारका बताया गया है-बाह्य और आभ्यन्तर। बाह्य लिंगको स्थूल एवं आभ्यन्तर लिंगको सूक्ष्म माना गया है ॥ ५१ ॥

जो कर्मयज्ञमें तत्पर रहनेवाले हैं, वे स्थूल लिंगकी अर्चनामें रत रहते हैं। सूक्ष्मतया शिवके प्रति ध्यान करनेमें अशक्त अज्ञानियोंके लिये शिवके इस स्थूलविग्रहकी कल्पना की गयी है। जिसको इस आध्यात्मिक सूक्ष्मलिंगका प्रत्यक्षीकरण नहीं होता है, उसे उस स्थूल लिंगमें इस सूक्ष्म लिंगकी कल्पना करनी चाहिये, इसके अतिरिक्त कोई अन्य उपाय नहीं है ॥ ५२-५३ ॥

समाजी — ब्रह्मसूत्र 3/2/11, 4/1/4 और श्वेताश्वतर उपनिषद् - 6/9 ने कहा गया है कि ब्रह्म का कोई भी लिङ्ग या प्रतीक नहीं है।

पंडित जी — ब्रह्मसूत्र व उपनिषद् के वचन को समन्वयात्मक सही दृष्टिसे न समझ के तुमने ये कह डाला कि "ईश्वर का कोई लिङ्ग या प्रतीक नहीं है", ये कहके तुमने अपने ही पांव पर कुल्हाड़ी मार दी, क्योंकि यदि ईश्वर का कोई लिङ्ग ही नहीं है तो फिर तुम ईश्वर को जानोगे कैसे? ईश्वर प्रत्यक्ष प्रमाण का तो विषय नहीं है, और बिना किसी लिङ्ग के अनुमान हो पाना ही असंभव है। यदि कहो कि तुमने शब्दप्रमाण के माध्यम से ईश्वर को जाना है, तो तब तो शब्द ही वह लिङ्ग हो गया जिससे ईश्वररूप लिङ्गी का ज्ञान हुआ। तो बिना लिङ्ग के तो जान ही नहीं पाओगे तुम ईश्वर को, तुमने तो वैदिक ऋषियों द्वारा दर्शन की हुई वेदवाणी व उनकी आप्तवाणी को ही झूठा कह दिया अप्रत्यक्ष रूप से।

उपनिषदों में तो लिङ्ग द्वारा ईश्वरोपासना उपासना के ऊपर कई मन्त्र हैं।

"अथाधिदैवतं य एवासौ तपति तमुद्गीथमुपासीतोद्यन्वा एष प्रजाभ्य उद्गायति । (छा० उ० 1/3/1)" अर्थात् "यह जो आदित्य तपता है इसके रूप में उद्गगीथ की उपासना करें" यहां आदित्य लिङ्ग है।
"ओमित्येतदक्षरमुद्गीथमुपासीतोमिति (छा० उ० 1/4/1)" अर्थात् "यह ॐ अक्षर उद्गीथ है, इसकी उपासना करो" यहाँ ॐ लिङ्ग है, जो कि वैदिक नाम है। "मनो ब्रह्मेत्युपासीतेत्यध्यात्मम् अथाधिदैवतमाकाशो ब्रह्मेत्युभयमादिष्टं (छा० उ० 3/18/1)" अर्थात् "मन व आकाश ब्रह्म है इस प्रकार उपासना करें" यहाँ मन तथा आकाश लिङ्ग हैं। "आदित्यो ब्रह्मेत्यादेश (छा० उ० 3/19/1)" अर्थात् "आदित ब्रह्म है, ऐसा उपदेश है", यहाँ भी आदित्य लिङ्ग है। "स यो नाम ब्रह्मेत्युपास्ते (छा० उ० 7/1/5)" अर्थात् "नाम ब्रह्म है इस प्रकार ब्रह्म की उपासना करें", यहाँ नाम ही लिङ्ग है, ये नाम वेदों को ही बोला गया है इससे पूर्व के मन्त्र में "नाम वा ऋग्वेदो..", वेद के ॐ नाम को तो पहले ही लिङ्ग बोल दिया गया, यानि वेदवाणी भी लिङ्ग ही है। छा० उ० 7/1-15 तक इस प्रकार से बहुत से लिङ्ग बताये गये हैं।

अब हम तुम समाजियों के झूठे दावों का खण्डन करते हैं। ब्रह्मसूत्र - 3/2/11 शाङ्करभाष्य अनुसार यहां यह कहा जा रहा है कि परब्रह्म में स्थान या उपाधिभेद से दो प्रकार के लिङ्ग या लक्षण उत्पन्न नहीं हो सकते, यानि परब्रह्म दो भिन्न लक्षणोंवाला नहीं है, परब्रह्म का जो स्वरूपलक्षण 'सच्चिदानन्द' कहा गया है, इसमें भी सत्, चित् व आनन्द एकदूसरे से भिन्न नहीं है। अतः इस सूत्र से यह सिद्ध नहीं होता कि परब्रह्म लिङ्गरहित है। ब्रह्मसूत्र 4/1/4 शाङ्करभाष्य में यह कहा गया है कि ब्रह्म या आत्मामें प्रतीकदृष्टि नहीं रखनी है, यानि नामरूपात्मक प्रतीक को ही तुम ब्रह्म मत मान लेना, फिर तो ब्रह्म भी नामरूपात्मक सीमित हो जायेगा और प्रतीक के प्रतीकत्व का भी अभाव हो जायेगा, फिर ब्रह्मसूत्र 4/1/5 शाङ्करभाष्य में कहा गया है कि ब्रह्म में प्रतीकदृष्टि नहीं रखनी है, अपितु प्रतीक में ब्रह्मदृष्टि रखो, यानि प्रतीक भी नामरूप से परे ब्रह्म ही है ऐसा जानते हुए प्रतीक के द्वारा उपासना करो। अतः इन ब्रह्मसूत्रों से कदापि यह सिद्ध नहीं होता कि ब्रह्म लिङ्गरहित है, यह भी सिद्ध नहीं होता कि प्रतीकोपासना वर्जित है।

श्वेताश्वतरोपनिषद् 6/9 में कहा गया है कि "ब्रह्म का कोई लिङ्ग नहीं", तो इसका अर्थ समन्वय की दृष्टि से यही समझना चाहिए कि "ब्रह्म का उसके स्वरूप से भिन्न कोई लिङ्ग नहीं है", जितने भी लिङ्ग ब्रह्म के हैं वे सब वास्तव में ब्रह्म से भिन्न नहीं हैं। उदाहरण के लिए धूम अग्नि का लिङ्ग है, परन्तु धूम अग्नि से भिन्न है, किन्तु ऐसा कोई लिङ्ग ब्रह्म का नहीं है जो उससे भिन्न हो, ब्रह्म के समस्त लिङ्ग जो उपनिषदादि शास्त्र में बताये गये हैं वे सब वास्तव में ब्रह्म से अभिन्न हैं। यदि वे ब्रह्म से भिन्न हो गये तो द्वैत हो जायेगा। इसिलिए तो माण्डूक्य उपनिषद् के सातवें मन्त्र में भी ब्रह्म को अलक्षणम् कहा गया, अर्थात् ब्रह्म का ब्रह्म से भिन्न कोई ऐसा लक्षण या लिङ्ग नहीं है जिसके द्वारा उसे जाना जा सके। परन्तु "ब्रह्म का कोई लिङ्ग है ही नहीं" ऐसा अर्थ लेना ठीक नही, क्योंकि ऐसा अर्थ लेनेपर श्रुति युक्ति के विरुद्ध हो जायेगी और श्रुति अन्य श्रुति के भी विरुद्ध हो जायेगी। इसलिए 6/9 के शाङ्करभाष्य में भी कहा गया है की "धूम-अग्नि के समान ब्रह्म का कोई लिङ्ग नहीं", यानि ब्रह्म का ब्रह्म से भिन्न कोई लिङ्ग नहीं, जितने भी लिङ्ग हैं वे वास्तव में ब्रह्म से अभिन्न हैं।

---

*